अखंड ज्योति संस्थान मथुरा में वंदनीय माता जी के आरंभिक दिन

महाशक्ति की लोकयात्


भूतों वाली बिल्डिंग जिसमें हमारे गुरुदेव 30 वर्ष रहे -Akhand Jyoti Sansthan ,Mathura.
जो जैसा सोचता है और करता है, वह वैसा ही बन जाता है।
अखण्ड ज्योति

ओमप्रकाश,दया और श्रद्धा तीनों परम पूज्य गुरुदेव की स्वर्गवासी पत्नी सरस्वती देवी के बच्चे थे लेकिन नई मां से यह बच्चे ऐसे घुल-मिल गए जैसे वर्षों से जानते हों। । माताजी ने भी उन्हें अपने हृदय में अटूट प्रेम का स्थान दिया । माताजी के आने से घर का वातावरण कुछ ही दिनों में बदल गया। ऐसा लगने लगा जैसे पतझड़ में वसंत की देवी आ गई हो। घर के काम-काज, बच्चों के रख-रखाव आदि सभी में एक निखार सा आ गया। सब तरफ सौंदर्य और सुव्यवस्था दिखने लगी। इस परिवर्तन ने हर एक मन-प्राण व अंतःकरण को छुआ। इस छुअन ने अनेकों सजल भावनाएं जगाई।

अपने आराध्य की अंतर्चेतना व अंतर्भावना से तो माताजी पहले ही मिल चुकी थीं,प्रत्यक्ष मिलन इन्हीं दिनों हुआ। इस मिलन के हर पल में, हर घड़ी में एक अपूर्व अलौकिकता थी।

यह किसी सामान्य विवाहित दंपत्ति का मिलन नहीं था। पति-पत्नी के सामान्य सांसारिक मिलन की तरह इसमें स्थूल और लौकिक दृष्टि नहीं थी। यह तो परम पुरुष और माता प्रकृति के मिलन की तरह अद्भुत था। इसमें सर्वेश्वर सदाशिव और भगवती महाशक्ति के मिलन की अलौकिकता थी।

नई सृष्टि के सृजन का बीजारोपण, मिलन के इन्हीं पलों में हुआ। ईश्वर चिंतन और चर्चा के बीच वे दोनों जब भी इकट्ठे बैठते, भविष्य की नई संभावनाओं पर चर्चा करते,उनके आराध्य उन्हें नई भूमिका के लिए तैयार करते।

तीव्र साधना काल

यह गुरुदेव की तीव्र साधना का काल था। गायत्री महापुरश्चरणों की श्रृंखला अपने अंतिम चरण में थी। अखण्ड ज्योति मासिक पत्रिका का प्रकाशन विधिवत प्रारंभ हो चुका था। आजकल का विश्वव्यापी विशालकाय गायत्री परिवार तब अखण्ड ज्योति परिवार के रूप में अंकुरित होने लगा था। इसकी उपयुक्त साज-

संभाल के लिए, सही पालन-पोषण के लिए मां की आवश्यकता थी।

मां का अर्थ केवल एक-दो संतानों को जन्म देने तक सीमित नहीं था। जन्म देने भर से कोई मां नहीं बन जाया करती। मां तो वही है, जो अपनी संतानों को श्रेष्ठ संस्कार दे। उनमें अपने प्राणों को उड़ेलकर उनका भाव विकास करे। उन्हें विश्व उद्यान के श्रेष्ठ पुष्पित पादपों के रूप में विकसित करने के लिए जरूरी खाद-पानी की व्यवस्था जुटाए।

यह काम आसान नहीं है। इसके लिए कठोरतम साधना और अध्यात्म उपार्जित आत्मशक्ति की आवश्यकता है। अपनी भावी रीति-नीति के अनुरूप माता भगवती इन दिनों यही करने में जुट गईं। माताजी ने अपने आराध्य के संसर्ग में अनेकों गुह्यमंत्रों, बीजाक्षरों, योग की गहन प्रक्रियाओं का ज्ञान इसी समय अवधि में किया। माताजी की अपनी विशिष्ट साधना की शुरुआत आंवलखेड़ा स्थित हवेली के ठीक उसी स्थान से हुई जहां कभी तपस्वी प्रवर

श्रीराम ने अखण्ड साधना दीप प्रज्वलित किया था। इस स्थान पर मातजी का साधनाकाल बहुत ही थोड़े समय के लिए रहा क्योंकि अखण्ड ज्योति के प्रकाशन की वजह से परमपूज्य गुरुदेव का मथुरा रहना अनिवार्य था। पहले कुछ अंकों के आगरा से प्रकाशित होने के बाद अब अखण्ड ज्योति मथुरा से प्रकाशित होने लगी थी। साधकों, जिज्ञासुओं और आगंतुकों का आवागमन भी बढ़ने लगा था। मथुरा में पहले लिया गया किराये का मकान भी छोटा पड़ने लगा था। नई परिस्थितियों के अनुरूप वर्तमान अखण्ड ज्योति संस्थान के मकान को किराये पर लिया गया और माता भगवती, ताई जी, बच्चों व अपने आराध्य के साथ अखण्ड ज्योति संस्थान (वर्तमान का घीयामंडी वाला आवास) के आंगन में आकर वास करने लगीं। इस आवास के बारे में हमारे पाठक चित्रों सहित एक full length लेख पढ़ चुके हैं। अगर आपने किसी कारण मिस कर दिया हो तो आप हमारे वेबसाइट को फिर से विजिट कर सकते हैं। हमारे यूट्यूब चैनल पर काफी जानकारी प्रकाशित की गयी है।

Click here

माता भगवती की ज़िम्मेदारियाँ एवं व्यस्तता

अखण्ड ज्योति संस्थान के आंगन में माता भगवती प्रायः सभी की माताजी बन गईं। पास-पड़ोस के बच्चे ही नहीं, अखण्ड ज्योति कार्यालय में आने-जाने वाले वरिष्ठ लोग भी उन्हें 'माताजी' कहने लगे। यहां आते ही उन्होंने अनेकों जिम्मेदारियां एक साथ संभाल लीं। प्रेम, सदाशयता, सहिष्णुता और श्रमशीलता की प्रकाश-रश्मियों का पुंज उनके व्यक्तित्व को और भी अधिक प्रकाशित करने लगा। यहां वह सबसे बाद में सोती और सबसे पहले जगती। उनके जगने का समय तो निश्चित था लेकिन सोने के समय के बारे में कोई ठिकाना नहीं था क्योंकि हर दिन इतने तरह के नए-नए काम आ जाते थे कि सोने में प्रायः देर हो ही जाती और कुछ नहीं तो समय-कुसमय आने वाले आगंतुकों की भोजन व्यवस्था में ही विलंब हो जाता। देर से सोने के कारण व स्थिति कुछ भी हो, वह रात्रि तीन बजे बड़े ही नियम से जग जाया करती थीं। जागरण के पश्चात् नित्यकर्म से निवृत्त होकर वह योग-साधना के लिए बैठ जातीं। उनकी पूजावेदी पर सदा परमपूज्य गुरुदेव एवं गायत्री माता का

चित्र प्रतिष्ठित रहता था। वही उनके जीवन सर्वस्व और आराध्य थे। अपने आराध्य में ही वे जगन्माता गायत्री की अनुभूति करती थीं। इस चित्र का पंचोपचार पूजन करके प्राणायाम की कुछ विशिष्ट प्रक्रियाएं संपन्न करतीं। इसी के साथ गायत्री महामंत्र का जप उनकी अंतर्चेतना में होने लगता। उनकी कठिन साधना से जाग्रत एवं चैतन्य गायत्री महामंत्र के प्रत्येक बीजाक्षर का स्फोट उनके अस्तित्व के विभिन्न गुह्य केंद्रों में होता रहता । यह उनके द्वारा किए जाने वाले गायत्री जप की अद्‌भुत प्रणाली थी । जप के अनंतर वह ध्यानस्थ हो जातीं। ध्यान की भावदशा में वह अपने महाशक्ति के स्वरूप में परिपूर्णता से निमग्न होतीं। साधना का यह क्रम प्रायः सूर्योदय तक चलता रहता। इसके बाद घर और कार्यालय के अन्य काम-काज शुरू हो जाते। इन कामों को भी वह किसी भी तरह योग साधना से कम नहीं मानती थीं। वह कहा करती थीं कि काम चाहे छोटा हो या बड़ा, यदि सच्चे भाव से भगवान को अर्पित करके किया जाए, तो वह योग साधना बन जाता है। उससे ध्यान और समाधि की ही तरह योग विभूतियां प्रकट होती हैं।

माताजी की इन बातों में कोरा शब्द विस्तार नहीं, अनुभूति का सत्य समाया था। अपने कामों के द्वारा वह हर पल, हर क्षण साधना किया करती थीं। उनका कहना था कि स्वार्थ और अहंकार के तत्त्वों की विषाक्तता से प्रायः सभी कर्म कलुषित होते रहते हैं। इनके रहते हुए किसी भी कर्म का योग बनना संभव नहीं हो पाता। इनकी जगह यदि अपने आराध्य के प्रति निष्ठा और समर्पण की भावनाएं कर्म में समाविष्ट हो जाएं, तो सब कुछ बदल जाता है। कोई माने या न माने, फिर बरतन मांजना, झाड़ू-पोंछा करने जैसे हीन समझे जाने वाले काम भी ध्यान-साधना का रूप ले लेते हैं।

उनका यह अनुभव-सत्य उनके जीवन में रोज ही प्रकट होता था। झाड़ू-पोंछा और बरतन मांजने जैसे कामों से ही उनके कामकाजी दिन की शुरुआत होती थी। खाना पकाना भी एक बड़ा काम था। परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त आने वालों की बड़ी संख्या हमेशा घर में बनी रहती। आने वालों की संख्या कोई ठीक-ठीक निश्चित नहीं थी। कभी तो ये पांच-दस होते तो कभी तीस-चालीस तक हो जाते। स्थिति जो भी होती, इन सभी के भोजन की उपयुक्त

व्यवस्था माताजी को ही अन्नपूर्णा बनकर करनी पड़ती। अपने इस दायित्व को वह बड़े ही उत्साह के साथ निभातीं। भोजन करने वालों को, बनाए गए भोज्य पदार्थों के साथ मां के प्यार का भी अलौकिक आनंद मिलता। अथक परिश्रम वाले इस कार्य को करते हुए किसी ने कभी उनको चिड़चिड़ाते या परेशान होते हुए नहीं देखा। स्नेह स्मित बिखेरते हुए वह सदा काम में जुटी रहती थीं।

'ए जू' का रोचक प्रसंग

काम जब बहुत ज्यादा बढ़ गया, तब परम पूज्य गुरुदेव ने घर के कामों के लिए एक सहयोगिनी महिला की व्यवस्था कर दी। यह मथुरा के ही बैराग्यपुर मुहल्ले में रहने वाली एक गरीब विधवा थी, जो टूटी-फूटी कोठरी में एक छोटे-से बालक के साथ बिना किसी सहारे, बिना किसी आर्थिक स्रोत के दिन काट रही थी। जिस समय उसे रखा गया, उस समय उसकी उम्र 20-22 वर्ष रही होगी, लेकिन गरीबी की मार ने उसे असमय बूढ़ा कर दिया था। लंबे कद की यह सांवली महिला जली लकड़ी-सी लगती थी। उसकी

दुर्बलता के कारण उसके गालों में गड्ढे उभर आए थे, आंखें बैठ गई थीं। उसका नाम था, 'गुलाबो'। हर बात में उसकी ‘ए जू' कहने की आदत के कारण अखण्ड ज्योति संस्थान में उसका नाम ही 'ए जू' हो गया था। सभी लोग उसे इसी नाम से बुलाने लगे। ‘ए जू' कुछ ही दिनों में माताजी की प्रिय सहयोगिनी बन गई। माताजी द्वारा उसके स्वास्थ्य व खान-पान पर विशेष ध्यान दिए जाने के कारण थोड़े ही दिनों में वह दीन-दुर्बल के स्थान पर स्वस्थ, सुपुष्ट एवं सुंदर दिखने लगी। गली-गली में मारे-मारे फिरने वाले उसके लड़के को माताजी ने स्कूल में दाखिला कराया। वह और उसका बालक दोनों ही निहाल हो गए। 'ए जू' के सहयोग से काम की गति तो बढ़ी, पर माताजी की श्रमशीलता में ज़रा भी कमी नहीं आई। वह घर के सामान्य काम-काज के अलावा अखण्ड ज्योति कार्यालय के कामों में भी हाथ बंटाया करती थीं। परिजनों को भेजी जाने वाली अखण्ड ज्योति पत्रिका के रैपरों में वह टिकट चिपकाती, उन्हें भेजने की व्यवस्था करतीं । पाठकों एवं परिजनों के जो पत्र

कार्यालय में आते थे, उनके उत्तर लिखने में गुरुदेव की सहायता करना माताजी का प्रिय कार्य था। गुरुदेव के पास बैठकर वह अपने





पास पत्रों का ढेर जमा कर लेतीं। इसके बाद एक-एक पत्र पढ़कर गुरुदेव को सुनाती जातीं और वे उत्तर लिखते जाते। पत्रोत्तर देने का यह कार्य बड़ी ही तीव्र गति से संपन्न होता। जितनी देर में माताजी पत्र पढ़तीं, उतनी देर में गुरुदेव उत्तर लिख देते। एक बैठक में कम-से-कम सौ पत्रों के जवाब देने का कार्य संपन्न होता। उन दिनों की याद करके माताजी बाद में बताया करती थीं कि गुरुदेव तो सारे दिन अति व्यस्त रहते थे। उनका रात्रिकाल भी प्रायः साधना और समाधि में गुजरता था। बस पत्र लिखने का ही समय ऐसा था, जब मुझे उनका संग-साथ मिल पाता था। इन्हीं क्षणों में कभी-कभार एक-आध घर- परिवार की बातें हो जातीं। वैसे सामान्यतया घर-परिवार की बातों की तरफ से उन्होंने गुरुदेव को पूरी तरह से निश्चिंत कर रखा था। रिश्ते-नातेदार, परिवार, सगे-संबंधी सभी की देख- भाल, आवभगत का जिम्मा वही अकेली निभाती थीं। उनके प्यार भरे बरताव से सभी संबंधी एवं कुटुंबी प्रायः अभिभूत बने रहते थे। अखण्ड ज्योति संस्थान के निवास के इन्हीं प्रारंभिक वर्षों में वह दो संतानों की जननी बनीं। उनकी

पवित्र कोख से पहले मृत्युंजय शर्मा तथा बाद में शैलबाला का जन्म हुआ। धन्य हैं ये विशिष्ट विभूतियां, जिन्हें विश्व जननी ने अपनी कोख में रखा। अपने इन बच्चों को उन्होंने घर में सतीश और शैलो बुलाना शुरू किया। पारिवारिक सदस्यों के बीच सदा ही इनका यही नाम रहा। अपने इन बच्चों के भाव विकास के साथ उनकी दैनंदिन गतिविधियां यथावत चलती रहीं। उन दिनों उनके काम-काज को देखकर आने-जाने वाले आगंतुक, सगे-संबंधी, परिवार के सदस्य सभी हतप्रभ व हैरान रहते थे। उन्हें यह अचरज होता था कि माताजी इतना काम करती हैं, उन्हें थकान क्यों नहीं लगती है? कई बार तो वे ऐसे काम कर डालतीं, जिन्हें करना कई व्यक्तियों के सामूहिक श्रम से संभव होता। ऐसे ही एक बार उन्होंने 'ए जू' को साथ लेकर मकान की पुताई कर डाली। घर और कार्यालय के सभी आवश्यक कामों को नियमित रूप से निबटाते हुए पूरे मकान की पुताई करना किसी बड़े आश्चर्य से कम न था, परंतु उन्होंने अपने अकेले के दम पर सब कुछ कर ही डाला।

माताजी काम में लगे रहने का रहस्य

'ए जू' यदा-कदा उनके इस तरह दिन-रात काम में लगे रहने के रहस्य के बारे में पूछ लेती थी। उसके सवाल पर कभी-कभी तो वह हंस देतीं और कभी थोड़ा गंभीर होकर कहतीं,

“मन में समर्पण की तीव्रता हो, तो वज्र भी फूल हो जाया करता है। मेरे लिए हर काम चाहे वर बरतन मांजना, झाड़ू लगाना हो या फिर आचार्य जी के पास बैठकर पत्र लिखने में मदद करना, अपने को उनके चरणों में उड़ेलने, समर्पित करने का माध्यम है। मैं जितना ज्यादा काम करती हूं, मुझे उतना ही ज्यादा लगता है कि मैं अपनेआप को गुरुदेव को समर्पित कर रही हूं। ध्यान में मुझे अपने आराध्य के साथ एकात्मता का जो आनंद मिलता है, उसी की प्राप्ति घर और कार्यालय के इन साधारण समझे जाने वाले कामों में भी होती है।"

इस तरह के अनेक काम-काज के बीच उनके मातृत्व का विस्तार भी तीव्र गति से हो रहा था। उनकी वात्सल्य संवेदना सतत अपना विकास करती जा रही थी।

मातृत्व के विस्तार की सजल संवेदना की छुअन से आने-जाने वाले बरबस अभिभूत हो जाते थे। अखण्ड ज्योति संस्थान में आकर उन्हें हमेशा ऐसा लगता, जैसे वे अपनी सगी मां के पास आए हैं। इनमें से कइयों को माताजी अपनी सगी मां से कहीं बढ़कर लगतीं। वे अनुभव करते कि सगी मां तो फिर भी कभी थकान, परेशानी अथवा कार्यव्यस्तता वश अपने बच्चों को नजर अंदाज कर देती हैं, लेकिन माताजी का प्यार कभी कम नहीं पड़ता । सगी मां बच्चों के बड़े हो जाने पर उन पर उतना ध्यान नहीं देती, पर माताजी के लिए बच्चे सिर्फ बच्चे हैं, वे छोटे हों या बड़े । वे जैसे अपने बच्चों की सार-संभाल के लिए ही अवतरित हुई हैं।

घर-परिवार के दायित्व और कार्यालय के काम-काज की व्यस्तताएं कितनी भी क्यों न होतीं, परंतु माताजी के मातृत्व का आंचल कभी

भी छोटा न पड़ता। दिनोदिन उसका विस्तार व्यापक होता जा रहा था।

क्रमशः जारी To be continued